International Journal of Yogic, Human Movement and Sports Sciences 2018; 3(2): 674-675

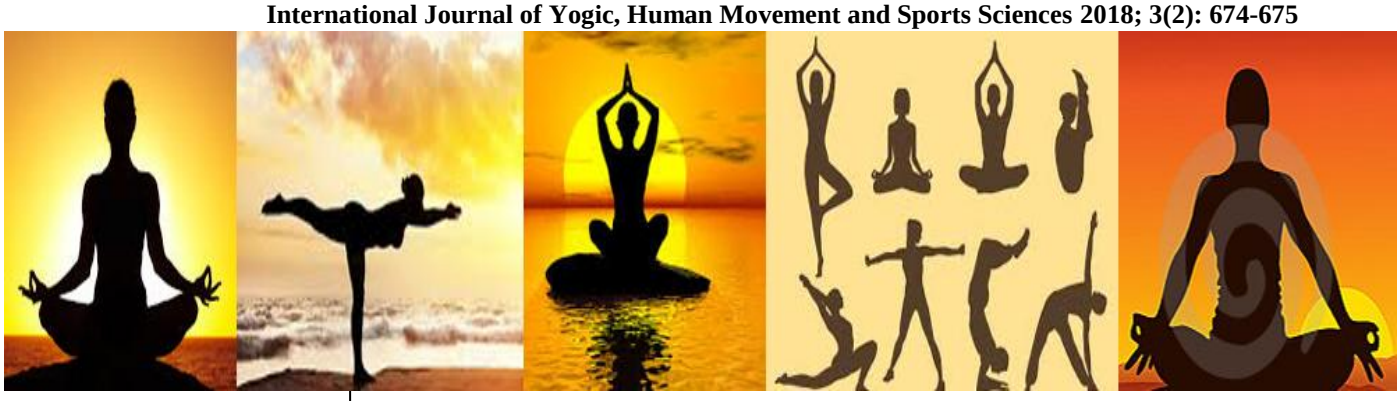

ISSN: 2456-4419
Impact Factor: (RJIF): 5.18
Yoga 2018; 3(2): 674-675
© 2018 Yoga
www.theyogicjournal.com
Received: 20-05-2018
Accepted: 21-06-2018

पौरूष पूनिया
एम.ए. योग द्वितीय वर्ष, चौ. रणबीर सिंह विश्वविद्यालय, जींद, हरियाणा, भारत

Correspondence
पौरूष पूनिया
एम.ए. योग द्वितीय वर्ष, चौ. रणबीर सिंह विश्वविद्यालय, जींद, हरियाणा, भारत

भावनात्मक उत्थान में भक्तियोग

पौरूष पूनिया

प्रस्तावना

जीवन में बौद्धिक विकास से ज्यादा जरूरी भावनात्मक विकास है क्योंकि भावनाएँ ही व्यक्ति का उत्थान करती हैं और भावनाओं के कारण ही व्यक्ति का पतन होता है। हम मानव जीवन के विकास के आरम्भिक समय में भावनात्मक उन्नति कर चरमोत्कर्ष पर पहुंचे थे परन्तु आज भावनाओं का ह्रास हासेने के कारण दिन–प्रतिदिन नीचे गिरते जा रहे हैं। आज मनुष्य प्रतिस्पर्धा के कारण जानवरों जैसा व्यवहार करने लगा है और अपने हक की होड़ में मरने–मारने पर उतारू हो गया है। दूसरों की कठिनाइयों में, उनके दुख दर्द में सुख की अनुभूति करने लगा है। मनुष्य ने प्रेम, सहयोग, संस्कार, संवेदनाओं का गला घोंट दिया है। नीति–अनीति के विचार त्यागकर अपने अनुकूल काम करने लगा है, कोई भी कुकृत्य करने से नहीं घबराता। इसी कारण आज समाज में चोरी, बलात्कार, हत्या आदि घटनाएं बढ़ती जा रही हैं। संवेदनाओं की दृष्टि से हम निम्नतम स्तर पर पहुंच गए हैं। योग में अनेक मार्ग हैं जो मनुष्य को मनुष्य बनाते हैं और भक्तिमार्ग उन्हीं मार्गों में से एक मार्ग है।

भावना का अर्थ –

भावना एक विशेष मानसिक अवस्था है जिसमें किसी वस्तु के प्रति व्यक्ति का अपने रवैये से एकाकार होता है। भावनाएं मनुष्य के वे आंतरिक रवैये हैं जिन्हें वह अपने जीवन की घटनाओं और अपने संज्ञान व सक्रियता की वस्तुओं के प्रति विभिन्न रूपों में अनुभव करता है। मन की कल्पना, प्रिय–अप्रिय स्थिति में उत्पन्न हुए विचार ही भावना है। अपनी भावनात्मक स्थिति के परिणामस्वरूप ही मनुष्य अनेक प्रकार की अभिव्यक्तियां करता है, जैसे –प्रसन्नता, प्रेम, रोना, घृणा आदि।[1]

भावनाएँ मस्तिष्क के उस क्षेत्र की कार्यशीलता से संबंधित है जो हमें निर्देश देता है और हमारे व्यवहार को प्रभावित करता है।

भावनात्मक घटना सिद्धान्त के अनुसार

भावनाएँ घटनाओं द्वारा प्रभावित और घटित होती हैं जो परिणामस्वरूप नजरिये और व्यवहार को प्रभावित करते हैं।[2]

भक्ति योग

भावना के आधार पर अपनी आत्मीयता का इतना विस्तार करना कि यह सम्पूर्ण विश्व ब्रह्माण्ड में व्याप्त हो जाए, भक्तियोग है। भगवान के प्रति उत्कट् प्रेम विशेष का नाम ही भक्ति है।[3]

स्वामी विवेकानंद जी के अनुसार – सच्चे व निष्कपट भाव से ईश्वर की खोज करना ही भक्ति योग है।[4]

भक्ति का एक विशेष गुण यह है कि इसमें प्रतिद्वंद्विता नहीं रहती। जो भी प्रेम पात्र से जुड़ता है वह अपना हो जाता है।

श्रीमद् भगवत गीता में श्रीकृष्ण ने स्पष्ट किया है कि भक्ति अथवा पूजा या किसी रूप मे प्रेम मनुष्य के लिए सबसे अधिक सरल, सुखद और स्वाभाविक मार्ग है।[5]

भक्ति के प्रकार

भक्त प्रहलाद ने भक्ति के नौ प्रकार बताए हैं – श्रवण भक्ति, कीर्तन भक्ति, स्मरण भक्ति, पादसेवन भक्ति, अर्चन भक्ति, वन्दन भक्ति, दास्य भक्ति, सख्य भक्ति, आत्मनिवेदन भक्ति, रागात्मिका भक्ति।[6]

1. श्रवण भक्ति – श्रद्धा एवं विश्वासपूर्वक हरि कथा का श्रवण, श्रवण भक्ति है।
2. कीर्तन भक्ति – ईश्वर की दिव्य लीला, नाम, गुणों के प्रसार वाणी द्वारा करना, कीर्तन भक्ति है।
3. स्मरण भक्ति – नित्य–निरंतर अनन्य भाव से ईश्वर का चिंतन करना, स्मरण भक्ति है।

4. पादसेवन भक्ति – शरीर, वाणी और मन से सद्गुरू चरणों की सेवा करना, पाद सेवन भक्ति है।
5. अर्चन भक्ति – ईश्वर का पूजन ही अर्चन भक्ति है।
6. वन्दन भक्ति – ईश्वर की प्रतिमा और सद्गुरू और यथाविधि नमन, वंदन भक्ति है।
7. दास्य भक्ति – ईश्वर के प्रति अपने आप को सेवक भाव से समर्पित करना ही दास्य भक्ति है।
8. सख्य भक्ति – ईश्वर के प्रति मित्र भाव रखना उनको प्रेमसूत्र में बांध लेना, सख्य भक्ति है।
9. आत्मनिवेदन भक्ति – अपने सम्पूर्ण अस्तित्व को ईश्वर के प्रति सर्वतोभवेन समर्पण कर देना ही आत्मनिवेदन भक्ति है।

भक्त के प्रकार

श्रीमद्भगवत गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने चार प्रकार के भक्त बताए हैं – आर्त, जिज्ञासू, अर्थार्थी, और ज्ञानी।[5]

1. आर्त भक्त – जो भयानक विपदाओं अबौर अन्य संकटों से घिर जाने पर भक्ति करते हैं।
2. जिज्ञासु भक्त – ब्रह्म तत्व को जानने की इच्छा से जो भक्ति करते हैं।
3. अर्थार्थी भक्त – जो सांसारिक वस्तु प्राप्त करने की इच्छा से भक्ति करते हैं।
4. ज्ञानी भक्त – जो सदा ब्रह्म में ही समाहित चित्त रहने के निमित ध्यान–समाधि का अभ्यास आवश्यक समझकर ब्रह्म के ध्यान में रत रहते हैं।

भावनात्मक उत्थान में भक्तियोग की भूमिका

महर्षि पतंजलि ने कहा है कि चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है।[7]

चित्तवृत्तियों के निरोध का योगानुशासन अपनाने पर मानसिक बिखराव रूकता है तथा अनौचित्य अपनाने पर अंकुश लगता है। बिखराव और अपव्यय की रोकथाम करने पर सहज ही सामर्थ्य का संचय होता है। उसके सहारे, सुविधा एवं प्रगति के अनेकों सरंजाम जुटाए जा सकते हैं। आत्मिक प्रगति का यही एकमात्र सुनिश्चित मार्ग है।[3]

गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है कि जो निरन्तर आत्मभाव में स्थित दुख–सुख को समान समझने वाला, मिटटी और स्वर्ण में समान भाव वाला, ज्ञानी, प्रिय तथा अप्रिय को एक सा समझने वाला और निन्दा स्तुति में भी समान भाव वाला है अर्थात् जो मनुष्य ईश्वर में आसक्ति रखता है, वह प्रत्येक भाव में समान रहता है जो पुरूष अव्याभिचारी भक्ति योग के द्वारा मुझको निरन्तर भजता है, वह तीनों गुणों सत्, रज, तम को भली भांति लांघकर सच्चिदानंद घन ब्रह्म को प्राप्त होने के लिये योग्य बन जाता है।[5]

भक्ति योग द्वारा मनुष्य मान और अपमान में सम रहता है, मित्र और वैरी के पक्ष में भी सम रहता है एवं सम्पूर्ण आरम्भों में कर्तापन के अभिमान से रहित रहता है।[8]

एक भक्त कभी किसी से घृणा नहीं करता, किसी की निन्दा नहीं करता। वह सभी मनुष्यों को समान दृष्टि से देखता है।[9]

एक भक्तही भय व चिन्ता से सम्पूण मुक्ति महसूस कर सकता है। वह भौतिक जगत के दुखों व मुश्किलों से परे जा सकता है। एक सच्चे भक्त की अपनी कोई इच्छा नहीं होती। जब नदी का सागर से मिलन होता है तब नदी को यह पता चलता है कि वो चिरकाल से सागर ही थी। इसी प्रकार जिस क्षण एक भक्त श्रद्धाभाव से ईश्वर के प्रति समर्पित हो जाता है तो वह तत्क्षण ईश्वर हो जाता है।

उपसंहार

भक्ति एक ऐसा साधन है जिससे मस्तिष्क के विचार और हृदय की भावना में संतुलन होता है यह मस्तिष्क को शान्त व स्थिर बनाए रखती है। भक्ति से मनुष्य में सहानुभूति, शिष्टता, शालीनता आदि उपजते हैं। ईश्वर की शरण में हम सदाचारी, संतुष्ट, तृप्त और सुरक्षित महसूस करते हैं।

भक्त दयालु, कामनारहित, आसक्तिरहित, मान–अपमान, सुख–दुख में सम रहने वाला होता है। वह हर परिस्थति में खुश रहता है। भक्त अपने सभी कर्मों को उस परमपिता परमात्मा को समर्पित कर देता है। उसका मन कुटिलता, धोखाधड़ी से रहित होकर निर्मल हो जाता है। भक्ति से ही मनुष्य में देवत्व गुण आते हैं। वह निर्भय हो जाता है, इसकी इन्द्रियों का दमन हो जाता है। भक्ति से ही मनुष्य में देवत्व गुण आते हैं। वह सर्वधर्म पालन करता है। वेदशास्त्रों का पठन–पाठन करता है और उसका अन्तःकरण सरल हो जाता है अर्थात् उसने मन में किसी के प्रति द्वेष नहीं रहता। ईश्वर के स्वरूप को जान लेने से भक्त में सेवाभाव उत्पन्न हो जाता है। परन्तु विचार करने मात्र से ही भावनात्मक उत्थान संभव नहीं है। इसके लिए अनेक प्रयास करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. जेम्स विलियम, ''भावना क्या है'', माइंड, 9, 1884
2. हावर्ड एम. वाइस तथा रसेल क्रोपानजेनो, भावनात्मक घटना सिद्धान्त, 1996
3. काख्या कुमार, योग महाविज्ञान, स्टैण्डर्ड पब्लिशर्स, 2007
4. विवेकानन्द, ''विवेकानंद साहित्य'' (भाग–4), अद्वैत आश्रम कोलकाता, 2004
5. श्रीमदभगवत गीता, गीता प्रेस गोरखपुर, संस्करण संवत् 2007
6. वेदव्यास, महषि श्रीमदभगवत महापुराण, गीता प्रेस, गोरखपुर, संस्करण 2059
7. तीर्थंकर, ओमनन्द, पांतजल योग प्रदीप, गीता प्रेस गोरखपुर, संस्करण संवत 2073
8. गौड़, अश्रय कुमार, सरल यौगिक ग्रंथ (श्रीमदभागवत गीता), प्रकाशक डोलिया प्रस्तुक भण्डार, हरिद्वार संस्करण 2015
9. गोचन्दका, कृष्णदास हरि, ईशादिनौउपनिषद्, गीता प्रेस, गोरखपुर, संस्करण संवत 2073
10. सरस्वती निरंजनानंद स्वामी घेरण्ड संहिता, योग पब्लिकेशन्स, मुंगेर विहार, संस्करण 2011
11. रामसुखदास स्वामी साधक संजीवनी (श्रीमदभागवतगीता) गीता प्रेम गोरखपुर
12. नारद भक्ति सुत्र एवं शांडिल्य भक्ति सूत्र गीता प्रेस गोरखपुर संस्करण 2004